Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 2 ~ Issue 8 (2014) pp: 62-64
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

नन्द एवं मौर्यों की धार्मिक नीति

डा. लता व्यास
व्याख्याता
चौधरी बल्लू राम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय श्री गंगानगर

बिम्बसार के समय मगध साम्राज्य लगभग पूर्वी भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली राज्य बन गया था उसके वैवाहिक एवं मैत्री सम्बन्धों ने उस समय के लगभग समस्त शक्तिशाली राज्यों जैसे लिच्छवि, कोशल, मद्र, गान्धार आदि पर उसका प्रभाव कायम कर दिया। विवाहों तथा मैत्री सम्बन्धों द्वारा अपनी स्थिति मजबूत कर लेने के पश्चात उसने अपना विजय कार्य प्रारम्भ किया। इस विजय की प्रक्रिया में उसने अपने पड़ोसी राज्य अंग को जीतकर मगध साम्राज्य में मिला लिया। बिम्बसार की विजय ने मगध की उस विजय तथा विस्तार का दौर प्रारम्भ किया जो अशोक द्वारा कलिंग विजय के बाद तलवार रख देने के साथ समाप्त हुआ।

सत्ता के केन्द्रीकरण का यह दौर धार्मिक सहिष्णुता के लिए जरूरी था। क्योंकि छोटे–छोटे राज्यों में जहाँ हर एक शासक धार्मिक रूप से स्वतंत्र है, हमेशा राज्य प्राप्त करने की लालसा में एक उन्माद का वातावरण बनाता है जो कि समाज के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करता है फिर वह चाहे धर्म हो या कला स्थापत्य इस सत्ता का केन्द्रीकरण होना अतिआवश्यक है।

हर्यक वंश के पश्चात सन् 412 ई0 में अन्तिम हर्यक शासक नागदशक को मारकर शिशुनाग नामक व्यक्ति ने मगध पर अधिकार कर लिया जो नागदशक का सेनापति था। अजातशत्रु के समय से चले आ रहे मगध और अवन्ति के संघर्ष को शिशुनाग ने अन्तिम रूप से अवन्ति को जीतकर समाप्त कर दिया।

सूरसेन : राजा सूरसेन कालाशोक का पुत्र था उसके राज्यकाल में धर्म की उन्नति हुई। ऐसा कहा जाता है कि सूरसेन ने चारों दिशाओं में भिक्षुओं को तीन वर्षों तक निरन्तर हजारों प्रकार के दान दिये। एक अतिशयोक्ति कथा के अनुसार शूरसेन ने सम्पूर्ण विश्व के चैत्यों को दान दिये थे। यह अतिशयोक्ति इस तथ्य की द्योतक है कि सूरसेन के राज्यकाल में राज संरक्षण में अवश्य ही बौद्ध धर्म का विकास हुआ था।

बौद्ध लेखक तारानाथ के अनुसार द्वितीय बौद्ध संगीति के स्थविर यश और शाणवासी राजा सूरसेन के समकालीन थे। ऐसा लगता है कि सूरसेन अपने पिता कालाशोक के प्रभाव में आकर ही बौद्ध धर्म कि ओर आकृष्ट हुआ होगा। सूरसेन के समय बौद्ध एवं जैन धर्म तो फलफूल रहे थे लेकिन वैदिक हिन्दु धर्म भी अपनी पराकाष्ठा पर था। इस प्रकार सूरसेन में धार्मिक सहिष्णुता विद्यमान थी।

नन्दिवर्धन : नन्दिवर्धन शिशुनाग वंश का अन्तिम राजा था। इसके बारे में भी हमारे पास कोई खास जानकारी नहीं है। लेकिन आर्य मंजूश्रीमूलकल्प से ज्ञात होता है कि नन्दिवर्धन अपने प्रारम्भिक जीवन काल में बौद्ध धर्म के प्रति आकर्षित नहीं था परन्तु बाद में वह बुद्ध का प्रबल उपासक बन गया। उसकी जागरुकता धर्म के विस्तार में निश्चय ही सहायक सिद्ध हुई होगी।

बौद्ध धर्म से पूर्व नन्दिवर्धन अवश्य किसी दूसरे धर्म से प्रभावित रहा होगा चाहे वह जैन हो या हिन्दू वैदिक धर्म, इससे उसकी धार्मिक सहिष्णुता का परिचय मिलता है। बाणभट्ट के हर्षचरित से पता चलता है कि काकवर्ण की राजधानी के समीप घूमते हुए किसी व्यक्ति ने राजा की हत्या कर दी। यह हत्यारा कोई और नहीं बल्कि 'नन्द' वंश का प्रथम शासक महापदम नन्द था।

नन्द वंश के राजाओं की धार्मिक नीति :

नन्दों को पुराणों में नीच कुल का एवं अधार्मिक राजा कहा गया है। नन्द राजा अपनी प्रजा में लोकप्रिय भी नहीं थे। क्योंकि वह बहुत ही धन लोलुप एवं अनैतिक रूप से जनता से कर वसूल करते थे। उनमें धन का व्यसन तो अवश्य था, लेकिन वह किसी धर्म के प्रति कट्टर नहीं थे उन्हें पुराणों में अधार्मिक इसलिए कहा गया क्योंकि वो जनता से अनैतिक कर एकत्र करते थे। जैन ग्रन्थों में भी नन्दों का परिचय है।

लेकिन जिस प्रकार हमारे पास शिशुनाग वंश के विषय में अतिअल्प जानकारी है वैसे ही नन्द वंश के बारे में भी, जिससे हमें उनकी धार्मिक सहिष्णुता का पता लगाने में थोड़ा कठनाई तो अवश्य होती है। हमें ज्ञात है कि नन्द वंश का प्रथम राजा महापद्मनन्द था अतः अब हम उसकी धार्मिक सहिष्णुता एवं राज्य शासन के बारे में चर्चा करेंगे जिसके लिए हमारे पास केवल साहित्यिक साक्ष्य मात्र है।

महापद्मनन्द : महापद्म नन्द 344 ई0 पू0 के लगभग सिंहासन पर आरूढ़ हुआ भागवत पुराण की टीका का कथन है कि नन्दराज के पास दस पद्म सेना तथा इतनी ही सम्पत्ति थी। इसी कारण उसका नाम महापद्म नन्द पड़ा।

नन्दों का काल विशाल मगध–साम्राज्य की स्थापना का काल था। अनेक साक्ष्यों से महापद्म की सफलताओं के उल्लेख मिलते हैं पुराणों में वह 'एकछत्र पृथ्वी का राजा' अनुल्लंघितशासक, भार्गव (परशुराम) के समान, सर्वक्षत्रान्तक, एकराट् आदि कहा गया है।

तारानाथ के अनुसार नन्द राजा बुद्ध का उपासक था उसने काशी में निवास कर रहे बौद्ध भिक्षुओं को समर्थन प्रदान किया। ऐसा कहा जाता है कि उसने काशी में निवास कर रहे बौद्ध भिक्षुओं की अनेक प्रकार से सहायता की थी। उसने अपने धर्मगुरू कल्याणमित्र की आज्ञा का पालन करते हुए बुद्ध की अस्थियों को प्राप्त कर चैत्यों का निर्माण करवाया था और बौद्ध भिक्षुओं के लिए यह चैत्य पूजा–अर्चना के लिए प्रदान किया था। उसके समय में स्थविर महादेव जीवित था और बौद्ध धर्म का प्रचार कर रहा था। व्हेनसांग ने नन्दों द्वारा बनवाये पाटिलपुत्र में 5 स्तूप देखे थे। संस्कृत का महान व्याकरणाचार्य पाणिनि नन्दों का मन्त्री था और वह ब्राह्मण था

धननन्द : परिशिष्टपर्वन[1] का साक्ष्य भी नन्दों को जैन मानने के पक्ष में हैं। नन्द राजाओं के मन्त्री भी जैन थे आवश्यक सूत्र से ऐसा पता चलता है। नौंवे नन्द (जिसको धननन्द कहते थे) का मन्त्री शकटाल या शकटार था। उसके दो पुत्र हुये स्थूलभद्र और श्रीयक। शकटार की मृत्यु के पश्चात स्थूल भद्र को मन्त्री पद दिया गया परन्तु उसने स्वीकार नहीं किया वह छठे जिन से दीक्षा लेकर साधु हो गया। तब श्रीयक को मंत्री पद दिया गया क्योंकि नन्दों ने इस पद को वंशानुगत बना दिया था शकटार भी जैन था।

'सुख बोधा' तथा आवश्यक सूत्र[2] आदि ग्रन्थों में प्रदत्त जैन कथाओं के अनुसार नवां नन्द राजा कार्तिक पूर्णिमा को पाटलिपुत्र में बहुत दान किया करता था 'वंसत्थपकासिनी' नामक बौद्ध ग्रन्थ के अनुसार दान दिये जाने वाले धन की व्यवस्था के लिए नन्द राजा ने एक दानग्ग खोल रखा था जिसका संचालन एक संघ करता था। इसके सदस्य विद्वान ब्राह्मण ही हो सकते थे और उनमें सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण को अध्यक्ष चुना जाता था। उससे अधिक विद्वान ब्राह्मण के आ जाने पर उसे वह पद छोड़ना पड़ता था।

नन्द राजाओं के समय भारत में ब्राह्मण, बौद्ध, जैन, आजीवक आदि कई धर्म एवं सम्प्रदाय विद्यमान थे। जो उत्तरोत्तर विकास कर रहे थे। नन्द राजा मुख्य रूप से तो जैन धर्म को मानने वाले थे। ऐसा कहा जाता है नन्द राजाओं तथा चन्द्रगुप्त मौर्य के संरक्षण में जैन धर्म सर्वप्रथम सारे भारत में फैला।

कुछ विद्वानों का ऐसा मानना है कि बिम्बसार, अजातशत्रु उदायी, महापद्मनन्द और चन्द्रगुप्त मौर्य जैसे मगध सम्राट जैन मुनियों, बौद्ध भिक्षुओं, और ब्राह्मणों का समान रूप से आदर करते थे।

नन्द राजाओं ने किसी भी धर्म के मानने वालों पर अत्याचार नहीं किया, बल्कि उन्होंने साम्राज्य का एकीकरण किया जिससे बाद के सम्राटों को एक विस्तृत शासन एवं सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में पिरोने का शुभ अवसर मिला जैसा कि हमें ज्ञात है कि आचार्य चाणक्य जो धननन्द के दरबार में अपनी विद्वता के कारण उच्च आसन पर बैठ गये थे और धननन्द ने उन्हें उनके केश पकड़कर अपमानित किया था। इस अपमान के कारण ही चाणक्य ने नन्दों का समूल नाश करने की कसम खायी थी और आजीवक का वेश धारणकर वहाँ से भाग निकला था।

चन्द्रगुप्त के साथ चाणक्य तक्षशिला आया तक्षशिला उस समय विद्या का प्रधान केन्द्र था। और चाणक्य वहाँ का आचार्य था। उसने चन्द्रगुप्त को सभी कलाओं तथा विधाओं की विधिवत शिक्षा दी अतिशीघ्र ही वह सभी विधाओं में पारंगत हो गया। यह युद्ध विद्या में भी पर्याप्त निपुण हो चुका था। अब चाणक्य ने एक शक्तिशाली सेना तैयार कर चन्द्रगुप्त से मगध पर आक्रमण करने को कहा। अब ग्रामों और नगरों को जीतना प्रारम्भ हुआ लेकिन लोग उनके विरूद्ध उठ खड़े हुए और उन्होंने सारी सेना को घेरकर नष्ट कर दिया। अब चाणक्य और चन्द्रगुप्त मौर्य वन में भाग गये और सोचने लगे कि अब तक युद्ध का कोई फल नहीं निकला केवल हमारी सेना ही नष्ट हुई है। चलें अब हम जनता के विचारों का पता लगायें। अतः भेष बदल कर उन्होंने परिभ्रमण किया। वे दिन भर घूमते और रात को किसी गांव में ठहर जाते और मनुष्यों की बातचीत सुनते। एक स्त्री एक गांव में पुवे बनाकर अपने लड़के को दे रही थी। वह लड़का चारों ओर के किनारों को छोड़ जाता था और बीच का भाग खा लेता था यह देखकर माता ने कहा कि इस लड़के का व्यवहार चन्द्रगुप्त के समान है जिसने कि राज्य लेने का प्रयत्न किया था लेकिन बिना सीमा प्रान्तों को जीते सीधे मध्य में आक्रमण किया और जिस कारण उसकी पराजय हुई।

*Corresponding Author: डा. लता व्यास

मौर्य सम्राटों की धार्मिक नीति :

मौर्य साम्राज्य का संस्थापक सम्राट इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य के नाम से जाना जाता है चन्द्रगुप्त मौर्य भारत के उन महानतम सम्राटों में से है जिन्होंने अपने व्यक्तित्व तथा कृतियों से इतिहास के पृष्ठों में क्रान्तिकारी परिवर्तन उत्पन्न किया है। उसका उदय इतिहास की एक रोमांचकारी घटना है।

देश को मकदूनी दासता से मुक्त करने तथा नन्दों के घृणित एवं अत्याचार पूर्ण शासन से जनता को त्राण दिलाने और देश को राजनीतिक एकता के सूत्र में संगठित करने का श्रेय इसी ख्यातनामा मौर्य सम्राट को प्राप्त है।

भारतीय इतिहास के अनेक महान व्यक्तियों के समान चन्द्रगुप्त मौर्य का वंश भी अन्धकार पूर्ण है। उसकी उत्पत्ति के विषय में ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों में परस्पर विरोधी विवरण मिलते हैं। फलस्वरूप उसकी जाति का निर्धारण भारतीय इतिहास की एक जटिल समस्या है। ब्राह्मण ग्रन्थ उसे एक स्वर में शूद्र अथवा निम्न कुल से सम्बन्धित करते हैं, जबकि बौद्ध तथा जैन ग्रन्थ उसे क्षत्रिय सिद्ध करते हैं।

संदर्भ सूचि

1. आर0 सी0 मजूमदार, एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी,
2. झा और श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास
3. राय चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एशन्ट इण्डिया
4. श्रीराम गोयल, प्राचीन भारत का इतिहास (320 ई0 तक)
5. हरिदत्त वेदालंकार, भारत का सांस्कृतिक इतिहास
6. आवश्यक सूत्र

*Corresponding Author: डा. लता व्यास